सुदामा पाँडे के प्रजातंत्र में नारी

निर्भय सिंह

शोध छात्र, हिन्दी विभाग,

अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़

दलित जिस मन्दिर का एक-एक ईट रखकर निर्माण करता है, वह मन्दिर खुद उसका नहीं होता | विडम्बना यहाँ भी यही है कि मूल स्रोत होने के बावजूद, परिवार भी स्त्री का अपना नहीं होता; वह भी बाप, पति या बेटे का ही होता है | हाँ, उसकी मर्यादा और हितों की रक्षा वह जान देकर भी करती है | वह उस परिवार की इज्जत होती है, मगर इस इज़्ज़त की परिभाषा परिवार का केन्द्रीय पुरुष तय करता है- जिसके पीछे धर्म,संस्कृति, वंश और रक्त की परम्पराएँ होती हैं | वह जन्मदात्री है, मगर वंश पिता के नाम चलता है और बेटा ही वंशधर कहलाता है | परिवार की बनावट एक सामंती दुर्गा की तर्ज पर की जाती है, जिसे हर 'बाहरी' हमले से बचाकर रखना होता है | अगर दुर्गा का हर सदस्य निष्ठावान समर्पित और चौकस नहीं होगा तो बाहरी हमले या भीतरी विद्रोह उसे नष्ट कर देंगे | वस्तुतः सामंती समाज इन पारिवारिक दुर्गो की द्वीप श्रृंखला से बना होता है | इन दुर्गों के नियंत्रण एवं सुरक्षा की बागडोर भले ही पुरुषों के हाथों में हो, बोझ सारा स्त्री के कंधों पर ही होता है | उसका कर्तव्य है कि दुर्ग के हर सदस्य के स्वास्थ्य, भोजन और क्षमता को बनाए रखने की व्यवस्था में ढील न आने दे; वंश-परम्परा चलाए रहे | वह अधिकारहीन कर्तव्यों की गौरवशाली प्रतीक हैः वह अन्नपूर्णा है | उधार के अधिकारों का वह उसी सीमा तक प्रयोग कर सकती है जितने की अनुमति गढ़ स्वामी उसे सौपता है- या जो परिवार के लिए असुविधाजनक नहीं होते | उसे कही या अनकही सख्त हिदायत होती है कि अपना सारा जीवन और संसाधन वह सिर्फ परिवार के संवर्धन और संरक्षण में लगाए रखेगी | कर्तव्यों में जरा-सी भी ठील उसे न केवल सारे अधिकारों से वंचित कर सकती है ; बल्कि उसे फालतू

बोझ की तरह ठिकाने भी लगा सकती है | उसके सम्मान की एक मात्र शर्त है परिवार के प्रति उसके निष्कंप वफादारी..... वह हर सांस में भगवान से परिवार की कुशल-क्षेम के लिए प्राथना करती है | व्रत उपवास और तपस्या द्वारा अपना होना सिद्ध करती है इसकी हर पूजा पति-पुत्र प्राप्ति के लिए कृतज्ञता ज्ञापन है | इन्ही की सेवा में प्राणोत्सर्ग करने वाली स्त्री, देवी की तरह पूँजी जाती है क्योंकि संसार के सारे स्वर्ग उसके चरणों में होते हैं | वह हर भारतीय स्त्री का रोल मॉडल होती है- **राजेन्द्र यादव** (कथा जगत की बागी मुस्लिम औरते पृ. सं. 9-10) | राजेन्द्र जी की ये बातें कहीं 'धूमिल'' के काव्य में भी दिखाई पड़ती हैं-

"बीसवी शताब्दी के सातवें दशक के

आखिरी दिनो, स्त्रियाँ स्त्रियाँ थीं

घर के चहबच्चों में सधवा-

डूबती शोहदों की मुमकिन-सी भाषा में

कविता की संसद थीं |

हरी-हरी ताजा दम और गरम

जिसमें तोदू की तर थी, और मोदू की मद थी"

(बीसवीं शताब्दी का सातवाँ दशक,पृ.59)

धूमिल कहते है कि किताबों की बात लोग किताबों तक ही सीमित रखना चाहते हैं | जब नारी को देवी के रूप में देखा जा रहा है तब निसन्देह उसने पुरुषों को श्रीदेवता माना-

"वह उन्हें उठाती है और

आँखों में, बाँहों में और पिण्डलियों में भर लेती है |

क्वारी जाँघों में, एक सपना उभरता है

होंठों के पिच से एक सिसकी

उछलती है और आहों की झील में

छलांग लगा जाती है |"

(जनतंत्र: एक हत्यारा सन्दर्भ, पृ. 72-73)

यद्यपि नारी आज भी पुरुषों को देवतुल्य ही मानती है, परन्तु नारी के प्रति पुरुष नजरिया काफी बदल गया है | ऐसा नही कि नारी नहीं बदली आज की नारी प्राचीनकाल की नारी न होकर वह समय के अनुरूप स्वयं को ढाल रही है | माँ और बुराई के व्यवसन में फसें बेटे के संबंधों के बारे में धूमिल कहते है –

"लगातार हारते जुआड़ी के हाथो की नोट

हो रही है | देह के बहुत बाहर

मै तेरा बेटा हूँ, तू मेरी माँ है |

मगर,सुन-

हम दोनों के बीच का रिश्ता कहाँ है ?

पता नहि कब गिर गया वह तेरे

आँचल मेरी फटी जेब से,इन दिनों

खाली हाथ हम, दोनों जीने के लिए

विवश हैं, एक दुसरे को दिए गए फरेब से"

(आदम इरादों से बित्ता भर उठी हुई पृथ्वी पृ.105-106)

आज यह आवाज बुलन्द है- 'मैं नारी जरूर हूँ पर हारी नहीं हूँ, मुझ पर अब जुल्म मत ढाओ क्योंकि यदि मेरा मौन टूटेगा

तो तुम्हारा बसा बसाया उपवन बिखर जायेगा | धूमिल के शब्दों में –

"हर बार की तरह

तुम सोते हो कि इस बार भी यह

औरत की लालची जाँघ से शुरू होगा |"

(सुदामा पाँडे का प्रजातंत्र पृ.21)

हर औरत की एक कहानी होती है | कुछ की कहानी दर्द भरी तो कुछ की खुशियाँ भरी होती हैं | जिनकी खुशियाँ भरी होती हैं उनमें भी कहीं न कहीं दर्द छिपा होता है | उस दर्द का हम या तो एहसास नहीं कर पाते या फिर वे हमें एहसास का मौका नहीं देती| सुदामा पाण्डे में धूमिल कहते हैं कि –

"लड़की! लड़की !!तुम क्या करोगी ?

तुम क्या करोगी ? काँपती अंगुलियाँ

चोटी के फन्ने बनाती हैं

"मैं उसे अपनी यादों में जिन्दा रखूँगी

अपने रिबन का नाम

उसके नाम पर रखूँगी |"

(जनतंत्र: एक हत्यारा सन्दर्भ, पृ. 73-74)

आज के बदलते समय में ज्यादातर औरतें स्वयं को भूल चुकी हैं | सवाल उठता है कि – क्या इसके लिए सिर्फ औरत ही जिम्मेदार है ? नहीं, बल्कि हमारा वह समाज भी जिम्मेदार है, जिसकी गंदी मानसिकता ने तमाम अनैतिक कार्यों के लिए महिलाओं को विवश कर दिया है | वह स्पष्ट कहते है –

"चमड़े को गाने दो प्यार

यौवन अराजक तत्वों से बनता है

चमड़े को गाने दो प्यार'

भाषा की तंगी में लगभग

नंगी होती हुई औरत ने कहा

इच्छाओं के लोकतंत्र में हम

चमड़े का सिक्का चलाएँगें"

(चमड़े को गाने दो प्यार, पृ.126)

यह सत्य है कि औरतें भी भ्रष्टाचार को बढ़ावा दे रहीं हैं परंतु यह भी सत्य है कि औरतों में इन बुराइयों का जन्मदाता हमारा पुरुष समाज ही है | वह कहते हैं –

"फिर भी हम, ढूँढेगे रक्त-मांस मज्जा के

व्यवहारिक व्याकरण में देहरस |

खूटी अगर पूछती है तौलिया से,

तो पूछे शरीर के छिपे हुए हिस्से का भेद"

(चमड़े को गाने दो प्यार, पृ.126-127)

ग्रामीण महिलाओं के लिए तो यह समाज और ही कष्टदायक है | आज जो कुछ वो कर रही हैं जरूरी नहीं की शौक बस कर रही हों | अवश्य कोई न कोई रहस्य होता होगा ? ऐसा रहस्य जिसे न तो बताना चाहती है और न ही हमारा समाज उसे जानने की कोशिश करता है | धूमिल ग्रामीण औरतों के बारे में बेबाक राय रखते हैं –

"माना कि आपने उसे जब से चौका दिया है

बिना बच्चे के पांच वर्ष बीत जाने के बावजूद

उस औरत ने न कभी शिकायत की है और

न अपने चरित्र पर शक करने का मौका दिया है"

(मैमन सिंह, पृ. 52)

आमतौर पर जुल्म ज्यादती व शोषण की शिकार महिलाएँ ही होती है | वह शोषण शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार का हो सकता है | आखिर हमारा समाज वह रहस्य जानने की कोशिश क्यों नहीं करता ? क्यों बदचलन व बदनाम नाम का ख़िताब देकर मुँह मोड़ लेता है ? वह कह उठते हैं-

"क्यो रोटी है? बदनसीब औरत !

क्या तू नहीं जानती कि भाषा

बलात्कार से बालिग होती है ?

बुढ़िया के आँसू सूख गए | वह मुस्कुराई

और लड़की का हाथ पकड़कर

भीड़ में गुम हो गई |"

(स और त का खेल, पृ.85)

बदचलन कही जाने वाली औरतों को देखकर हम उनसे बात करना पसन्द नहीं करते, क्योंकि हम डरते है अपने उस कथित समाज से जो हमें इसकी इजाज़त नहीं देता | वह नहीं चाहता की हमदर्दी जताकर एक बदचलन स्त्री को सही रास्ते पर लाया जाय | घर के पर्दे में रहने वाली बहूँ बेटियाँ यदि ऐसी औरतो से हमदर्दी का साहस करती भी हैं यही हमारा समाज उन्हें भी दोषी ठहराने से नहीं चूकता, क्योंकि वह भी इस दानवी समाज से घायल है और वह स्नेह पाने के लिए कुछ भी करने को तैयार रहती है | धूमिल कहते है -

"रात की नंगी देह

जहाँ खबर होने से पहले ही, शहर

खत्म हो चूका है | उबासियों में ऊँघते

तुमहारे नितम्ब फून की तरह,

युवा नजरों के इशारों पर टंकित

करते हैं | हलो ! "हलो-हलो" करता हुआ

देह के अन्धेरे में नीली नस-नाड़ियों वाला,

उत्तेजित चमड़ा चिल्लाता है और मेरी

जाँघों, भाषा के खिलाफ-

शहर कानून का उल्लंघन करती हैं |"

(सत्यभामा पृष. 121)

ऐसी औरतों को सही रास्ते पर लाया जा सकता है बशर्ते उनकी परेशानियों व् मजबूरियों को समझकर सुलझाने का प्रयास किया जाये, जबकि समाज में व्याप्त गंदगी सोच से ऐसा संभव नही हो पाता, चाहकर भी हम कुछ नहीं कर सकते औरते भी अपने ऊपर ज़्यादती की जिम्मेदार है ? धूमिल कहते हैं-

"लड़की इस तरह मत रो

कहीं ऐसा न हो कि वापस लौटकर

न आए वह जंगली चिड़िया

जो हत्यारे चाकू पर अपना गीत

पैनाती है और गाती है अमन की

उस सच्चाई को जो जिन्दगियों के लिए

जीने का नुस्खा बन जाती है"

(जनतंत्र: एक हत्यारा सन्दर्भ, पृ.70-71)

आज भी भारत में तमाम ऐसी महिलाएँ हैं जो किसी भी जुल्म को चुपचाप सह लेती है पर आवाज नहीं उठाती | कर्तव्य पालन व् धर्म रक्षा (जो उन्हें संस्कार में दिया गया होता है) में जुल्म सहते-सहते वे एक दिन स्वयं को ही समाप्त कर डालती है | वह कह उठते हैं-

"रात भर जूझते हैं देह के अन्धेरे में

और सुबह हम अपनी खाइयाँ बदल लेते है"

X X X X X X X X

"ऐसे थे संयमी कि –

औरत एक बार जाँघ पर उतर गई

उनके लिए मर गई, चतुरी चमार की लटूरी पतोहू"

(पाँचवे पुरखे की कथा, पृ. 124)

आज ऐसी महिलाओं को उस चक्रव्यूह से बाहर निकलने हेतु यह बताने की आवश्यकता है कि तुम सिर्फ जुल्म सहने के लिए नहीं बनी हो बल्कि वह सब कुछ कर सकती हो, जो पुरुष करता है | तुम्हें भी अपने पैरों पर खड़ा होकर अपनी मर्जी से जीवन जीने का पूरा हक है- वह कहते हैं कि नई उम्र की विधवाओं की स्थिति और भी दयनीय होती हैं –

"एक ब्याहता अपना घूँघट सँभालती है

उसके माथे का रंग नीला पड़ गया है

एक क्वारी माँग उस चिड़िया-सी चहचहाती है

अभी-अभी जिसका घोसला उजड़ गया है |

यही शायद अर्थी का अर्थ है, और मैं सोचता हूँ"

(जनतंत्र: एक हत्यारा, सन्दर्भ, पृ. 74)

हर औरत को अपने बारे में स्वयं फैसला लेने का हक है | चुप रहकर सिर्फ सोचने से कुछ हासिल नही होगा ? उनको अपने अन्दर आगे बढ़ने की क्षमता पैदा करनी होगी? हमारा समाज औरतों को उनका हक देने में बहुत पीछे है, इसी वजह से उन्हें अनैतिक व्यवहारों का सामना करने के लिए विवश होना पड़ता है | धूमिल के शब्दों में –

" चूल्हे का कोयला और पतीली की दाल

बुदबुदाते हैं- रोटी का क्या हुआ ?

औरत आँचल ठीक करती है,

एक कनफटी कमीज खूटी पर झूलती है

दौड़-धूप के बाद बेतहाशा लोटे आदमी का मुँह धोती है

बाल्टी चौका बुलाता है, ओह ! आह !!

अच्छे बच्चे रोते नही"

(वापसी,पृ.98)

लैंगिक भिन्नता के चलते बालिकाओं के साथ परिवार के अलावा बाहर भी पक्षपात होता है | स्वास्थ्य और शिक्षा में भेदभाव बरतते हुए उसके हाथ से अवसर छीना जाता है जिससे औरतों के खिलाफ अपराधों की हवा चलती है| धूमिल कहते हैं-

"चार जनो से भरा पूरा कमरा इससें कुछ ज्यादा लगता है

-पिता एक्का हाँकता है

माँ कोठी में बरतन माँजती है

बेटी जवान है-

उसके जिम्मे संतरो के बिक्री का काम है

बेटा पढ़ता है तीसरी जमात में"

(कमरा, पृ.103)

सरकार औरतों के विकास हेतु जितना ध्यान दे रही है, हमारा समाज उतना ही कतरा रहा है | सरकार औरतों को अधिकार सम्पन्न बनाना चाहती है | क्योंकि निर्णय कोई भी औरत जीवन के सम्बन्धों में ठोस निर्णय तभी ले सकती है, जब आर्थिक रूप से वह सम्पन्न हो | परिणामत: आज यदि कुछ महिलाओं में बुराइयाँ फैली है तो अधिकांश के अंदर अच्छाइयाँ भी आयी हैं | धूमिल के शब्दों में-

"देह तो आत्मा तक जाने के लिए सुरंग है रास्ता है |

तुम्हारी उँगलियाँ जैसे कविता की गतिशील पंक्तियाँ हैं |

तुम्हारी आँखें कविता की गम्भीर किन्तु कोमल

कल्पना है, तुम्हारा चेहरा जैसे कविता की जमीन है

तुम एक सुन्दर और सार्थक कविता हो मेरे लिए |"

(पत्नी के लिए, पृ.120)

आज शिक्षा, रोजगार व नौकरी आदि अनेक क्षेत्रों में उनकी उपस्थिति दर्ज हो चुकी है | समाज सेवा में भी वह काफी आगे है | इसके बावजूद भी अफसोस पहलू यह है कि समाज द्वारा आज भी उनको उनके अधिकारों से वंचित रखने की साजिश जारी है | यहाँ महिलाओं को घर के रसोई के अलावा किसी और काबिल समझा ही नहीं जाता | धूमिल कहते हैं –

"आप चौके में प्याज काटती हुई

बेगम के रजिया आँसू देखेंगे

और चापलूसी में साबूत लौकी पर

चक्कू फटकारते हुए कहेंगे

ऐसे काटते हैं बहादुर नौजवान

दुश्मन का सिर,"

(मैमन सिंह, पृ. 51)

समाज शायद नही जनता कि 'जब पेड़ कटता है तो उससे जुड़े पत्ते फूल और फल जमीन पर गिरकर बिखर जाते हैं | ठीक इसी प्रकार औरत के भटकने से पूरा परिवार भी बिखर जाता है |' नीव के कमजोर होने से जिस प्रकार दीवार गिर जाती है, वैसे ही महिलाओं के अशिक्षित होने और चहार दीवारी में कैद रहने से सामाजिक ढाँचा भी चरमरा जाता है | वे कहते हैं कि आज भी महिलाओं को लोग एक वस्तु के रूप में ही देखते है –

"सरे भर कबाब हो

एक अद्धा शराब हो

नूरजहाँ का राज हो, खूब हो ?

भले ही खराब हो |"

(सुदामा पाँडे का प्रजातंत्र, पृ. 19)

आजादी के 67 सालों बाद आज हमारे देश ने अनेक क्षेत्रों में प्रगति की है, लेकिन एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें प्रगति तो हुई, लेकिन आजादी के 67 साल बीतने के बाद जैसी प्रगति होनी चाहिए थी वैसी प्रगति नही हुई; वह क्षेत्र है- 'नारी की स्थिति' इसमें सुधार तो हुए लेकिन जैसे सुधार की अपेक्षा थी ? वैसा सुधार नहीं हुआ| धूमिल कहते हैं-

"आजादी के 11 वर्ष पहले

सिर्फ हमारे गुलाम चेहरे बने थे |

दादी अम्मा के किस्से से मिला था

कमर के निचे का फूलदान, लेकिन पूरा नही था |"

(पी. सुदामा और मूर्ति के लिए, पृ.118)

आज भी हमारे रूढ़िवादी समाज में महिलाओं को भिखारियों और दासियों के समान ही समझा जाता है, इतना ही नहीं आज भी लड़के और लड़कियों में भेदभाव किया जाता है ? यह भेदभाव इनके शिक्षा तथा खाने-पीने और पहनावे में भी किया जाता है | सुदामा पाण्डे धूमिल कहते हैं –

"एक नन्हीं लड़की गुदड़े से खेल रही है

दाई माँ | दाई माँ | क्या तुम्हें खबर है |"

(खून का हिसाब, पृ. 107)

आज भी हमारे समाज में लड़कियों को खुद की जिन्दगी जीने की आजादी नहीं है | इन्हें अपनी बात कहने तक का भी मोका नहीं दिया जाता | ये अपने मनपसन्द कपड़े को नहीं पहन सकती, अपने मन मुताबिक खा पी नही सकती, सब पर पाबन्दी होती है | ज्यादातर ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाए अपने घर में ही एक कैदी के समान जीवन जीने पर विवश होती है | धूमिल कहते हैं-

"अपनी नाबालिग आँखों से, वह सिर्फ

इतना करेगी कि हम दोनों के बीच

काठ या अपना रख देगी | और पूछेगी

उसकी व्याखा | किताब को परे सरकती

हुई उसकी आँख निश्चल ! निष्पाप !!

मगर आँखे शहर नहीं है ऐ लड़की !

पानी में बसी हुई कच्चे इरादो की

एक भरी पूरी दुनिया है |"

(टयूशन पर जाने से पहले, पृ. 23)

विश्व विकास मंच की लैंगिक समानता के हालिया रिपोर्ट में महिलाओं तथा पुरषों की बराबरी के मामले में भारत 112 वें स्थान पर है | फिर भी लोगों की आँखे नही खुल रही हैं | फिर भी वह उसे (नारी) अलग नजर से ही देखते हैं –

"सुनो प्यारो! प्यारियो !!

स त का जमाना है

अ और त खेल दिखाना है,

ए – बजे ताली

(जो न बजाए उसके नाड़े को गाली)"

(स और त खेल, पृ.84)

रिपोर्ट में शिक्षा, स्वास्थ्य एवं आर्थिक भागीदारी तथा राजनीतिक ताकत इन चार आधार पर महिलाओं का आंकलन किया गया है, जिसमें स्वास्थ्य के मामले में 132 वाँ स्थान तथा आर्थिक भागीदारी में 128 वाँ और शिक्षा में 120 वाँ स्थान विश्व में भारत का है | यह देश में महिलाओं को दोयम दर्जे की नागरिकता को उजागर करता है | वह कहते हैं-

"अपनी अध्यापिका का किताबी चेहरा पहनकर

खड़ी हो जाएगी वह खूबसूरत शोख लड़की

मगर अपनी आँखे, वह छिपा नहीं पाएगी"

(टयूशन पर जाने से पहले, पृ.22)

दुख: यह है कि – इस देश में महिलाएं राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री जैसे पदों पर आसीन रह चुकी है ? फिर भी हालत दयनीय है | धूमिल की ये पंक्तियाँ इन्हें सार्थक सिद्ध करती प्रतीत होती हैं-

"बच्चों को सुला दिया जाता है लोरियो से

झिड़कियों में पीपल का भूत पलको को मूंदता है

तारो भरे आसमान में सपनों के निचे माँ का ह्रदय
कथरी-सा

बिछता है, मगर पिता जगता रहता है |"

(नींद के बाद, पृ.109)

धूमिल कहते हैं कि आज भी देश का बड़ा वर्ग मानता है कि स्त्री का शिक्षा से सरोकार नहीं होना चाहिए, क्योंकि स्त्री की सीमा चहारदीवारी ही है – वह अभावात्मक स्थिति में जीने को विवश है-

"रात में एक ही कमरे में सोते है चार जन

एक दुसरे से टाँगें बचाते हुए

उनके सिर हाथो के ऊपर एक-दुसरे को

पहचानते हैं | बेटी जानती है कि-

माँ को पेट रह गया है, बेटा जनता

है कि बहन की छाती पर 'पाका'

नही-'क्या' है | माँ- बाप समझते हैं, कि बच्चे

समझदार है, बहरहाल वे सब जानते हैं"

(कमरा, पृ.103-104)

वे लोग भूल जाते हैं कि लडकियाँ आज लड़कों से कन्धे से कन्धा मिला-मिलाकर हर क्षेत्र में चाहे वह सेना हो, अंतरिक्ष हो, खेल की दुनिया हो, राजनीति का क्षेत्र हो, साहित्य का क्षेत्र हो, जैसे हर क्षेत्र में देश का नाम रोशन कर रही हैं | धूमिल के शब्दों में – महिलाओं ने अथक परिश्रम से साबित कर दिया कि समुचित अवसर मिलने पर नारी कोई भी काम किसी भी परिस्थिति में कर सकती है | पर पुरुष उसे वैसे करने नहीं देता | धूमिल के शब्दों में-

"यह खतरनाक भी उतना नहीं

जितना किसी लड़की का पीछा करना

देह के जलाशय में तैरना न जानते हुए भी

कूल्हों के कशर कूद, भरना |"

(कर्फ्यू में एक घन्टे की छूट, पृ.43)

नारियों की स्थिति के लिए महिलाओं को स्वयं संगठित होकर आगे आना होगा तथा इसके साथ ही इन्हें जागरूक एवं शिक्षित भी होना होगा | इनके साथ ही साथ पुरुष समाज को भी अपनी सोच तथा मानसिकता बदलनी होगी तथा नारियों को उनका बराबर का हक देना होगा तभी नारी की दशा में सुधार होगा और समाज की सही मायने में तरक्की मणि जायेगी |

"क्योंकि वह एक साथ चुन लेना चाहता है-

तितलियाँ, स्कार्फ, होंठ और फूलों के जादुई रंग"

(कर्फ्यू में एक घन्टे की छूट, पृ.44)

निष्कर्षत: अपने ऊपर हो रहे जुल्म ज्यादती रोकने के लिए हर महिला को घर की चारदीवारी से बाहर निकलकर जुल्म के

खिलाफ आवाज़ उठानी होगी तभी इस क्षेत्र में कामयाबी मिल सकती है | सुदामा पाँडे का प्रजातंत्र की भूमिका में विद्यानिवास मिश्र भी लिखते हैं- "मैं इनकी भाषा का न पक्षधर हूँ न स्त्री के शरीर का, इस तरह भाषिक उपयोग करने को काव्योचित मानता हूँ, परन्तु जो कवि फरेब से, हर तरह के फरेब से एकदम उफना गया है | वह शहरी नारी-गरिमा के फरेब को भी दूर फेंक देता है, शायद उसका उत्साह विस्थापित है, पर उसका इमां अपनी जगह पर है और यही बात हमारे लिए अधिक महत्वपूर्ण होनी चाहिए |"

आधार ग्रंथ

1. सुदामा पाँडे का प्रजातंत्र, सुदामा पाँडे 'धूमिल', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2014
2. स्त्री संघर्ष का इतिहास,राधा कुमार, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली | 2007
3. स्त्री के लिए जगह- राजकिशोर, लोक भारती प्रकाशन, इलहाबाद |2011
4. आदमी की निगाह में औरत, राजेन्द्र यादव, अक्षर प्रकाशन, दिल्ली 2010
5. कथा जगत की बागी मुस्लिम औरते राजेन्द्र यादव और मुशर्रफ आलम जौकी राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली 2012

सम्पर्क सूत्र : 9452798624

e-mail:nirbhaysingh8787@gmail.com